chapter-1

— जीवन परिचय

प्रथम अध्याय — पारिवारिक परिचय

— व्यक्तित्व परिचय

साहित्यिक जीवन-परिचय

साहित्य के सृजन में, साहित्यकार के संस्कार, पारिवारिक-वातावरण, उनके मनस-पटल पर अंकित विविध प्रभाव तथा इस प्रभाव के द्वारा निर्मित विचारधारा और मान्यताओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है । व्यक्ति के जीवन में कब कौन सी घटनाएं, उसे असाधारण बना देने में निमित्त बन जाती है - यह कहा नहीं जा सकता । एक साहित्यकार के साहित्य का अध्ययन करते समय अध्येता के समक्ष यह एक खोजपूर्ण विषय होता है कि अमुक व्यक्ति को किन वस्तुओं ने, किन परिस्थितियों ने, किन घटनाओ ने साहित्यकार बना दिया । इसलिये प्रस्तुत अध्याय में रामदरश मिश्र जी के साहित्यिक जीवन-निर्मात्री परिस्थितियों व घटनाओं के निरूपण के लिये उसके जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत किया गया है ।

वंश - परिचय -:

मिश्र जी के पितामह गांव में एक जमींदार के यहां काम करते थे । उनके यहां किसी चीज की कमी नहीं थी । वे स्वयं बहुत शक्ति शाली लठैत थे । लोग उनके प्रताप से डरते थे लेकिन वे बहादुर थे, दुष्ट नहीं, जिस प्रकार उनकी शक्ति विख्यात थी, उसी प्रकार उदारता भी विख्यात थी, लेकिन उम्र के साथ-साथ सारा भार पिताजी के कंधों पर आ पड़ा । उनके पिताजी का नाम रामचंद्र मिश्र था । पिताजी- पितामह की इकलौती संतान थे । पिताजी किसी देवता से कम नहीं थे । उनके सिर पर भी इतने देवता आते रहते थे । वे सांप को वश में करने का मंत्र भी जानते थे । इतने सीधे, निश्छल, सदैव दूसरों की सेवा के लिय तत्पर रहने वाले थे । किसी के घर में आग लगने पर कूद पड़ना, सांप का ज़हर उतारना, शादी-ब्याह हो या गमी, सब जगह मौजूद रहते थे । जरूरत मंदो की जरूरत भी पूरी करने वाले थे । घरवालों से छिपाकर उनको अनाज वगैरह पहुंचाते थे । इसके लिये घर की आवश्यकताओं की पूर्ति न होने की वजह से उनको खेत रेहन रखने पड़ते थे । कर्ज लेना पड़ता था । अच्छा खाना, पहनना, घूमना, घुमाना, मेले पर जाना, बाजार जाना, रामायण गाना

रिश्ते में घूमना यह उनकी दिनचर्या थी ।

मिश्र जी की माँ {कंवल पाती} भी बहुत कर्मठ थी । उसमें कर्म, स्वाभिमान, अपने संघर्ष से घर को शक्ति दी, गौरव दिया तथा व्यक्तित्व के सांस्कृतिक आयाम द्वारा गांव की औरतों का नेतृत्व प्राप्त किया । किसी की भी पूजा-पाठ, शादी-ब्याह, पर्व-त्यौहार में माँ ही नेतृत्व करती थी । उन्हें सांस्कृतिक अनुष्ठानों के विधि-विधानों का भी ज्ञान था तथा लोक-कथाओ का भी ज्ञान था । उनमें उर्जा थी, यद्यपि वह अभावो में तनी हुई थी फिर भी किसी की धौंस बर्दाश्त नहीं करती थी । माँ ही शरण स्थली थी जो सबको आश्रय देती थी । अतः मिश्र जी ने अपने जीवन में माता-पिता दोनों का ममतामय व्यक्तित्व पाया । परिवार सबसे बुनियादी आयाम है । इनको अपने परिवार से ही कविता, संगीत, कथा, मस्ती आदि के संस्कार प्राप्त हुए । जीवन को देखने का इतना अवसर उनको दी गयी स्वतंत्रता के कारण ही मिला । सारे अभावो के बावजूद जो एक अकुंठ मस्ती मिली । इनके अस्तित्व को ठोस हाथों द्वारा संवारने-सहेजने में माँ का बहुत योगदान रहा । जो उन्हें हीनता के बोध से बचाती रही ।

मिश्र जी के तीन भाई और दो बहिनें है । जिनमें बड़ी बहिन ससुराल में होने वाले अत्याचारों से पीड़ित होने पर बीमार होकर मर गयी । जिसका असर मिश्र जी के जीवन और साहित्य में देखा जा सकता है । बड़ा भइया राम-अवध मिश्र अपने लिये संयासी तथा परिवार के लोगो तथा अन्यों के लिये सर्वस्य दाता थे । ऊपर से देखने पर जितने रुखे उतने ही भीतर से स्नेहशील थे । आर्थिक अभावों से उनको हमेशा जूझते देखा । उन्होंने इनके व्यक्तित्व के विकास में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । स्वयं मिडिल पास करके पढ़ाई छोड़ देने पर हम लोगों के लिये पढ़ाई के लिये मार्ग प्रशस्त किया । वे साहित्य के प्रेमी है । जब उन्हें मालुम पड़ा कि "मैं कविताएं करता हूं तो बहुत प्रसन्न हुए, उनकी इच्छा थी कि मैं बड़ा होकर बहुत बड़ा साहित्यकार बनूं ।"

मझले भाई रामनवल मिश्र और मिश्र जी दोनों हमजोली थे । साथ-साथ पढ़ते, गाते, बजाते, खेलते कूदते तथा आपस में मार-पीट करते थे ।

जन्म -:

मिश्र जी का जन्म गोरखपुर जिले के डुमरी बीहड़ कछार के एक गाँव में 15 अगस्त, श्रवण पूर्णिमा, 1924 की रात को हुआ था । इनके जन्म के सम्बन्ध में एक घटना यह हुई । इनके जन्म के समय प्रसूति-गृह में तमाम कीड़ें-मकोड़े भर गये थे यदि उस समय पड़ोस की एक फूआ नहीं आती तो इनका बचना मुश्किल था ।

तभी जीवन के प्रति अगाध विश्वास, निष्ठा और मूल्य मिला है । तो इसीलिये कीड़ें-मकोड़ों के बावजूद जीवन दायक कोई न कोई शक्ति, कोई न कोई इस देर सबेर मिलता ही रहा है । इसीलिये जीवन के प्रति आस्था को खंडित करने वाले साहित्य में इनकी आस्था जम नहीं पाती और अपने लेखन में वे जीवन-आस्था को जिलाये रखने की कोशिश करते है ।

बाल्यकाल -:

मिश्र जी का बचपन बहुत ही सादगी से बीता था । ये पढ़ते, लिखते भी थे तथा घर का काम-काज भी करते थे । पढ़ने में भी तेज थे । शौक-श्रृंगार में इनकी रूचि नहीं थी । इनका बचपन परिवार, स्कूल गाँव, खेतो-खलिहानों में बीता । प्रकृति के निकट होने से उनको अपनी जमीन से बहुत प्यार था । कछार के जीवन से उनको एक जीवन-शक्ति प्राप्त होती थी । प्रकृति से जूझने की शक्ति और उससे रस ग्रहण करने की सहृदयता प्राप्त होती थी। यही ठोस जमीन इनके लेखन में भी मिलती है । इनका लेखन भी इसी पर निर्भर रहता है ।

मिश्र जी बचपन से बहुत ही भावुक स्वभाव के थे । इसी भावुकता के कारण वह थोड़ी-थोड़ी बात में आहत हो उठते थे । इसी भावुकता के कारण इनके बचपन में इतना उल्लास, इतनी अकुंठ उद्दामता मिलती है । इसी के कारण प्रकृति के सौंदर्य को रस को ग्रहण करके प्रकृति के सौंदर्य के रस को ग्रहण करके भीतर ही भीतर कुछ अहसास भरती थी । इनके भीतर जो कविता थी, वह इस भावुकता का ही परिणाम थी । ये जब भी कोई करूण दृश्य देखते थे तब जल्दी ही भावुक हो जाते थे । उनका हृदय यह सहन नहीं कर पाता था । बचपन में ऐसी घटनाओं की छाप इनके हृदय पर जमती गयी । एक बार प्राइमरी स्कूल में एक मास्टर पं० रामचन्द्र तिवारी अपने भतीजे को स्कूल में बहुत मारते थे । उठा-उठाकर

पटकाते थे । सभी छात्रों के साथ इसी प्रकार का जुल्म करते थे । ऐसे दृश्य देखकर भावुक बाल-कवि का हृदय सहन नहीं कर पाता था । अब तक भावुकता उनके हृदय में समायी हुई है ।

मिश्र जी के बचपन की अबोध अवस्था में ही उपजी हुई एक अज्ञात बेचैनी थी । जिसे आसपास का जगत उत्तेजित करता था । बारह-तेरह वर्ष की अवस्था में गीत लिखने के लिये मन बेचैन हो उठता था । जब भी वे किसी का गीत सुनते थे तो मन बेचैन हो उठता था कि क्या वे ऐसा गीत नहीं लिख सकते । लेकिन लोक-गीतों की पंक्तियां उनके भीतर ही उन्हें छटपटाती रहती थीं ।

<u>शिक्षा</u> -:

देहात में पढ़ाई का माहौल नहीं बन पाता था । दूसरा अध्यापन का तरीका आतंक वादी था अर्थात ऐसा विश्वास था कि डंडे से ही ज्ञान का ताला खुलता है । वह धैर्य नहीं था जो बहुत प्यार से बच्चे के भीतर निहित क्षमता को खींचकर बाहर लाता । गुजराती में कहावत है - "सोटी वागे चम-चम विद्या आवे धम-धम ।"

° यदि इनकी माँ ने इनको पढ़ाना शुरू न किया होता तो आज यहां तक नहीं पहुंच सकते । भइया, बहिन और कुछ लोगों ने अक्षर ज्ञान देने की कोशिश की लेकिन इनको मंथर बुद्धि को देखकर सबने यह ऐलान किया कि पढ़ाई-लिखाई इसके बस का नहीं है लेकिन न जाने मां ने उनकी आंखो के भीतर क्या देख लिया था, पहचान लिया था और उसने एक दिन घोषणा की, कि मैं इसे पढ़ाऊंगी । दूसरी बार पढ़ाई से विरक्तिस्कूल के आंतक और मास्टर के निर्दयता पूर्ण व्यवहार के कारण हुआ । उस समय भी पं0 रामचंद्र तिवारी ने कहा, यह लड़का बहुत होनहार है । यह तो बहुत बड़ा आदमी बनेगा । इसके हाथ में कलम अच्छी लगेगी और उन्होंने उनके कान में कुछ मंत्र भी फूंक दिये । उनका यह स्नेह भरा हाथ ही यहां तक पहुंचाने में सफल हुआ है ।

प्रारम्भिक शिक्षा तो गांव के आसपास के स्कूल में ही प्राप्त की । 1937 में हिन्दी मिडिल पास किया । 1938 में उर्दू मिडिल पास किया । जब ये

छठीं कक्षा में पढ़ते थे तब किसी लड़के की कविता सुनकर उनके मन में ललकार सी उठी । उनके अंदर की बेचैनी कविता बनकर फूट निकली और राष्ट्रीय कविता लिखी । सन् 38 के आस-पास ढेर सारी कविताएं लिखी और एक राष्ट्रीय नाटक भी लिखा । उनकी कविताएं गोरखपुर से निकलने वाली पत्रिका "आहान" में छपी । धीरे-धीरे वे कविता को ही अपनी हॉबी ही नहीं, वरन अपनी जरूरत समझने लगे । कविता भी लिखते रहे तथा पढ़ाई भी करते रहे ।

टरसी स्कूल में पंडित रामगोपाल शुक्ल के निर्देश में परीक्षा पास की । बरहज में बाबा राघवदास के आश्रम (राष्ट्रभाषा स्कूल) से विशारद की परीक्षा पास की । इसके बाद साहित्यरत्न पढ़ने के लिये बरहज की ओर रवाना हो गये । 1943 को साहित्यरत्न में पास हो गये तथा "चक्रव्यूह" नामक एक प्रबंध-काव्य लिखा । 1945 को हिन्दू विश्वविद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा के लिये एडमिशन लिया । अंग्रेजी में कमजोर होने के कारण फेल हो गये । फिर हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के कहने पर दुबारा कैम्ब्रिज ऐकडमी स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा दी । उसमें वे फर्स्ट क्लास में पास हुए । इसके साथ वे समय समय पर कवि गोष्ठियों व सम्मेलनों में कविता भी किया करते थे । 1948 को रामनगर में एक कवि सम्मेलन हुआ और उनको उसका अध्यक्ष बना दिया । कश्मीर पर पाकिस्तान के हमले को लेकर इन्होंने एक कविता भी लिखी ।

ओ केशर के काश्मीर
उजड़े प्राणों के सूने बन में
नव वसंत आज भी उड़ाता
सूना अंचल आता होगा । [3]

बी0 एच0 यू0 से बी0 ए0 पास किया तथा फिर एम0 ए0 पास किया प्रथम श्रेणी में प्रथम । पंडित जी के निर्देशन से एम0 ए0 का लघु शोध प्रबन्ध लिखा । जिसका विषय था - ऐतिहासिक उपन्यासकार वृंदावनलाल वर्मा, एम0 ए0 करने के बाद पी0 एच0 डी0 में दाखिला लेने के लिये बनारस गये ।

वहां गुरूवर द्विवेदी जी के निर्देशन में हिन्दी साहित्य की दसवीं से तेरहवीं शताब्दी की सामग्रियों का पुनः परीक्षण, नामक विषय लिया, लेकिन द्विवेदी जी के मार्गदर्शन में न कर सकने के कारण उन्होंने डा० शर्मा के निर्देशन में हिन्दी आलोचना की प्रवृतियां और उनकी आधार भूमि नामक विषय लेकर शोध कार्य सम्पन्न किया । इसके साथ इन्हें सेंटल हिन्दू कालेज में अस्थायी लेक्चरशीप की सर्विस भी मिल गयी ।

<u>वैवाहिक जीवन</u> -:

सन् 1940 को जब मिश्र जी सोलह वर्ष के थे, उनका विवाह हो गया । जब ये इंटर में थे तभी पत्नी चल बसी लेकिन वह अपढ़ देहाती औरत होने के कारण उनके मन में उसके प्रति इतना दुख नहीं हुआ क्योंकि यह शादी नाबालिग अवस्था में हुई थी । अतः साल भर बाद उन्होंने दूसरी शादी की । जो सुंदर, शिक्षित व शीलवान थी तथा आधुनिक जीवन यात्रा में सही रूप में सहयात्रिणी बनी । उन्होंने अपनी पत्नी के बारे में लिखा है - "मेरी पत्नी ने जीवन के तमाम विष को अपने भीतर पिया और मुझे अमृत दिया है । उनके द्वारा गृह जंजाल से निश्चिंत कर दिये जाने की कारण ही मेरा इतना लिखना पढ़ना संभव हो सका है । मेरी रक्षा के लिये उन्होंने न जाने कितनों की नाराजगी झेली होगी और कटु आलोचनाएं पायी होगी ।3

शादी के समय के नववधू से लेकर आज तक उनकी पत्नी जीवन कर्म से साहस और उत्साह के साथ जूझती रही । वह बहुत ही कर्मठ है । जबकि व्यवहारिकवश वे दोनो ही अलग अलग कार्य करते थे लेकिन आवश्यकता वश एक दूसरे के क्षेत्र में प्रवेश भी करते थे । इनकी पत्नी सारे कार्य करते हुए भी अनेक ऐसे कार्य जो पुरूष के होते थे, उन्हे अपना बनाकर करती थी । परिवार में आत्मीयता प्राप्त होती थी अतः सुख पूर्वक जीवन व्यतीत होता रहा है ।

<u>साहित्यिक अभिरूचि और प्रेरणा</u> -:

संस्कारवश ग्रामीण परिवेश होने के कारण प्रकृति उनकी सहचरी बनी । यही से इनकी जीने की शक्ति, जीवन के प्रति आस्था और मूल्य प्राप्त किये । प्रकृति से जूझने की शक्ति और उससे रस ग्रहण करने की सहृदयता पायी है । यही वह ठोस जमीन है । जिस पर वह लेखन कार्य करते रहे है ।

...7..

प्रकृति के सौंदर्य से जो रस ग्रहण करते थे, वह उनके अंदर कुछ होने का अहसास भरती थी। भावुक व्यक्ति होने के कारण कविता बचपन से ही इनके भीतर ही भीतर गूंजती रहती थी। लेकिन बाहर निकल नहीं पाती थी। जब भी कोई कविता या गीत सुनता तो मन बैचेन हो उठता कि क्या वे भी कोई कविता नहीं लिख सकते हैं। लोक - परिवेश के विविध रूप-रंग उनके भीतर उतरते रहते।

एक बार एक सहपाठी ने बताया कि गांव के किसी लड़के ने कविता की है। यह सुनकर मिश्र जी के मन में ललक सी उठी, कि वे भी तो कविता लिख सकते है। जो वर्षों से उनके मन में भावनाएं दबी हुई थी। वह ललकार पाकर जागृत हो उठी। उसी दिन उन्होंने एक राष्ट्रीय कविता लिख डाली। उसके बाद से ये कविता लिखते रहे। दिन - रात कविता लिखने का नशा रहने लगा आैर इस काव्य सृजन में अद्भुत मिठास का अनुभव होता था आस-पास के परिचित विषयों प्रकृति की छवियों और कुछ किशोर भावों की झलक मन में उतरती थी। जो छंद में ढल जाने के लिये तड़पती थी। तभी उनकी कुछ कविताएं गोरखपुर से निकलने वाली पत्रिका "ब्राह्मण" में छपी।

पंडित राम गोपाल शुक्ल भी उनकी कविताओं की प्रशंसा करते थे, जब भी वे कविता पाठ करते थे तब उनके सहपाठी व अन्य लोगों द्वारा उनकी कविता की सराहना होती थी तो उनकोऐसा लगता था। जैसे लोग उस जैसे सामान्य व्यक्ति को भीतर से सम्पन्न बना रही है। उनके जीवन का कुछ अर्थ पुरा हो रहा है तो उनको ऐसा लगता था कि कविता उनकी हाॅबी ही नहीं जरूरत भी है।

बचपन में मिश्र जी ने मन्न जी की बाल कविताकली पढ़ी थी। भदनेश जी ने भी मन्नन जी के बारे में बहुत कुछ सुनाया था। उनको मस्ती, सहजता, घुमक्कड़पन, निर्भीकता, मानवता आदि की कहानिया मिश्र जी के भीतर वर्तमान थी और उनको ऐसा लगता था कि "मेरे कवि बनने की शर्तों मे से एक शर्त यह भी - मन्नन जैसा आदमी बनना। यही विचार उनको कवि बनने के लिये प्रेरित करते रहे। 5

मिश्र जी के मन में एक धुंधला सा सपना था - प्रोफेसर या संपादक बनने का । हिन्दी का प्रोफेसर बनने के लिये साहित्य रत्न करना जरूरी था । विशेष योग्यता पढ़ते समय वे कभी-कभी पंडित जी की अनुपस्थिति पर उनकी कुर्सी पर बैठकर तथा चश्मा लगाकर आंखो से कभी संपादक या प्रोफेसर का मोज बनाते थे । यह देखकर उनके आस पास के मित्र झूठी सही प्रशंसा करके कहते थे कि आप संपादक या प्रोफेसर लगते हों । तब उन्हें लगता था कि काश ऐसा हमारा भाग्य होता यही लगन और विश्वास को लेकर उन्होंने कार्यान्वित किया ।

साहित्य सृजन -:

जब मिश्र जी छठीं कक्षा में पढ़ते थे तब एक सहपाठी की प्रोत्साहन भरी ललकार से उनके भीतर की अभिव्यक्ति जाग्रत हुई और उन्होंने सर्जनात्मक दबाव का अनुभव किया । तभी उन्होंने पहली कविता की रचना की थी । फिर उन्होंने मदनेश जी की परम्परा में मँजी हुई घनाक्षरी और सवैये लिखे, जो प्रकृति और प्रेम से ओतप्रोत थे, और छंदों में समाज-सुधार सम्बन्धी कविताएं भी लिखी । उसके बाद से वे कविताएं करते गये और उनको छंद में वर्णिक और मात्रिक छंदों का ज्ञान होता गया । इसके बाद तो मानो उन पर कविताएं करने का नशा सा छा गया । जब भी कोई कविताएं करते थे तो मास्टर लोग व सहपाठी लोग उनकी प्रशंसा करते थे तथा उनको प्रोत्साहन भी देते थे । उन दिनों के काव्य-सृजन में एक अद्भुत मिठास अनुभव करता था । आसपास के परिचित विषयों, प्रकृति की छवियों और कुछ केशोर भावों की खुश्बू उनके मन में उतरती थी । जो छंद में ढल जाने के लिये तड़पाती थी । सन् 38 में हिन्दी मिडिल पास किया और ढेर सारी कविताएं लिखी और एक राष्ट्रीय नाटक भी लिखा । कुछ कविताएं गोरखपुर से निकलने वाली पत्रिका "ब्राहमण" में छपी ।

पं0 रामगोपाल शुक्ल भी उनकी कविताएं पढ़ते थे तथा उनको कविताएं लिखने के लिये प्रोत्साहित भी करते थे । एक बार संस्कृत पाठशाला में कवि-सम्मेलन हो रहा था । तब उन्होंने पहली बार उस सम्मेलन में कविता पढ़ी । इसके बाद बनारस में एक गोष्ठी में राष्ट्रीय कविता प्रस्तुत की पड़रौना से उनके लिये कवि सम्मेलन का निमंत्रण आया । इस तरह वे अनेक कवि-सम्मेलनों में जाते रहे तथा साहित्यिक वातावरण के निकट आते गये । इनके द्वारा उनको प्रसिद्धी भी बहुत

मिली । साहित्यरत्न की परीक्षा देने के बाद एक प्रबंध काव्य "चक्रव्यूह" लिखा ।

साहित्य-सर्जक मित्रों के अतिरिक्त उन मित्रों की संख्या अधिक थी जो साहित्य प्रेमी थे या केवल छात्र थे । भगतसिंह, मधुवन, उदय नारायण शुक्ल, बिपिन दीक्षित, रामायण राय, और भगतसिंह । भगतसिंह इनका खास सहपाठी था । 1946 से 1956 तक भगतसिंह इनसे और इनके परिवार से सम्बद्ध हो गये । वे इनके दुख-सुख, हंसी-खुशी के साथी बन गये । वे एक बार बी0 ए0 में फेल हुए तो होते ही चले गये । जब मिश्र जी पी0 एच0 डी0 करने लगे थे तो वे हर साल बी0 ए0 की परीक्षा देने आया करते थे ।

अध्ययन और लेखन -:

मिश्र जी को कविताओं का शौक बचपन से ही था । देहात में प्रकृति के नजदीक रहने से उनमें कविताएं करने की इच्छा पल्लवित हुई । फिर गांव छोड़ने के बाद भी जैसे-जैसे साहित्य को जानने लगे, उनकी इच्छा प्रवृत्ति होती गयी । वे अपनी पढ़ाई लिखाई के साथ साथ कविताएं भी करने लगे । समय-समय पर ये कविताएं पत्र-पत्रिकाओं में छपती थी ।

जब ये एम0 ए0 में थे तब 1951 को इनका पहला कविता संग्रह "पथ के गीत" छपा ।

सर्जनात्मक लेखन से इनका गहरा लगाव था । जैसे - एकांत अंधेरे में कोई पौधा चुपचाप बढ़ता, फूलता, महकता रहता है वैसे ही यह सुख उनके भीतर महकता रहता था ।

धीरे-धीरे इनका झुकाव प्रगतिवाद की ओर बढ़ने लगा और मार्क्सवाद भी पढ़ने लगे । उससे प्रभावित साहित्य की छवि भी धीरे धीरे समझने लगे तभी उन्होंने एक कविता लिखी -

" तुम्हें क्या दिया,
तुम्हें क्या दिया,
जिंदगी की राह में, "

तभी इनको साहित्यिक संघ का मंत्री बना दिया गया । संस्था के व्यवस्था

पक्ष की बागडोर उन्हीं के हाथ में थी तथा साहित्यिक संचालन भी उनके परामर्श से ही होता था ।

जब बड़ौदा में सर्विस मिली तब उन्होंने "बड़ौदे की शाम" नामक निबन्ध लिखा । "पानी के प्राचीर" उपन्यास भी बड़ौदा में ही लिखना शुरू कर दिया । वहां पर इनको मकान में रहने के लिय काफी समस्याओं का सामना करना पड़ता था । अरुचिकर मकानों के प्रतिकुल वातावरण में इन्होंने कई महत्त्वपूर्ण कविताएं भी लिखी । "आत्महत्या से पहले" कविता यहीं लिखी गयी । "आते घिर-घिर, जाते फिर-फिर" बाल सम्बन्धी कविता भी यहीं लिखी और कई महत्त्वपूर्ण निबन्ध भी यहीं लिखे । इसके साथ ही मकान सम्बन्धी उदासीनता का वर्णन " पिंजड़ा " नामक कहानी में किया ।

अहमदाबाद में आने के बाद इन्होंने शोध प्रबन्ध "हिन्दी आलोचना का इतिहास" बी0 एच0 यू0 से प्रकाशित किया । साबरमती के पास वाले मकान में न जाने कितनी कविताएं-कहानियां लिखीं । "जल टूटता हुआ" उपन्यास भी इसी मकान में लिखा ।

नदी के तट पर जब जाकर बैठते थे तो वहां की प्रकृति सौंदर्य को देखकर उनके मन में से यह गीत फूट निकलता था ।

रात-रात भर मोरा पिहुके
बैरिन नींद न आएं
बड़े भोर - सारस केंकारे
नदिया तीर बुलाए । [5]

इनकी अनेक कहानियां धर्मयुग, सारिका, आदि में छपी । "साहित्य संदर्भ और मूल्य" नाम से समीक्षात्मक निबन्धों का संग्रह आया । छायावाद का पुर्नमुल्यांकन प्रकाशित हुआ ।

सन् 1962 में मित्रों के सहयोग से बैरंग बेनाम चिठ्ठियां नामक काव्यसंग्रह प्रकाशित हुआ ।

दिल्ली विश्व-विद्यालय के हिन्दी विभाग के नगेन्द्र जी अध्यक्ष थे । वे मिश्र

जी के बारे में अच्छी धारणा रखते थे। इनकी शैक्षिक योग्यता, लेखन कर्म की वे पहले ही अनुशंसा करते थे। वे इन्हें अपने साथ गोष्ठियों व सभाओं में व कभी अपने घर भी ले जाते थे। लेखन सम्बन्धी कुछ विशिष्ट दायित्व भी सौंपा उन्होंने हिन्दी साहित्य के वृहत इतिहास के तेरहवें खंड के लिये छायावादोत्तर लेख लिखने के लिये कहा। जो बाद में "हिन्दी कविता: तीन दशक और हिन्दी कविता : आधुनिक आयाम" नाम से छपी। डा0 नगेन्द्र अपने साहित्यिक व्यक्तित्व के कारण एक ओर साहित्यिक व्यक्तियों को महत्व देते थे।

1963 में "धर्मयुग" में इनकी एक कहानी " खाली घर " छपी। इसके साथ ही आलोचनाओं के पत्र भी आते रहते थे। 1969 में इनकी अपनी आलोचना पुस्तक हिन्दी कविता - तीन दशक छपी। जिसे सबने बहुत पसंद किया। इसी वर्ष इनका एक उपन्यास " जल टूटता हुआ" तथा "पक गयी है धूप" कविता संग्रह भी छपा।6

डा0 सावित्री सिन्हा (जो विभागाध्यक्ष थी) के साथ अच्छे मैत्री संबन्ध थे। उन्होंने " हिन्दी साहित्य सभा " और अनुसंधान परिषद के कार्यों में मिश्र जी को भी लगा दिया। बाद में उन्हीं के प्रेरणा से नये कवियों की कविताओं का एक संकलन तैयार किया। "मुठ्ठियों में बंद आकार" इनके साथ दिविक रमेश और सुरेश ऋतुपर्ण भी थे। ऋषभचरण जैन एवं संतति के प्रकाशन से यह संकलन छपा।

"जल टूटता हुआ" के एकदम बाद 1970 में बीच का समय उपन्यास राधाकृष्ण प्रकाशन से प्रकाशित हुआ। 1972 में "सूखता हुआ तालाब" छपा नेशनल पब्लिशिंग हाउस से। 1974 में एक वह कहानी संग्रह छपा। 1976 में इनका लघु उपन्यास "रात का सफर" राधा कृष्ण प्रकाशन से छपा। इनकी साठवीं वर्ष गांठ पर इनकी पुस्तक इकसठ कहानियां छपी।

विश्वविधालय से अवकाश ग्रहण करने के बाद मिश्र जी की लेखनी सुप्त नहीं हुई है। सम्प्रति वे लगातार लिखते रहे है जिससे उनकी अनेक सर्जनात्मक एवं आलोचनात्मक नयी-नयी रचनाओं और उनके माध्यम से समकालीन हिन्दी साहित्य की गतिविधियों के दस्तावें के प्रमाण उपलब्ध होने की महत्ती एवं उजली संभावनाएं बनी हुई है।

साहित्यिक गोष्ठियां तथा संपर्क -:

जब मिश्रजी अपना गांव छोड़कर अन्य गांवों में शिक्षा प्राप्त करने के लिये गये तो वहां वे अनेक लोगों के संपर्क में रहे तथा कवि सम्मेलनों के माध्यम से साहित्य को भी जानने लगे और बड़े बड़े साहित्यकारों से उनका संपर्क भी बढ़ा ।

पं0 राम गोपाल शुक्ल जी को वे कविताएं लिखकर सुनाया करते थे । एक बार स्कूल में हो रहे कवि सम्मेलन में पं0 जी ने मिश्र जी को कविता पढ़ने के लिये कहा । तब पहली बार किसी मंच से कविता पढ़ने का संयोग प्राप्त हुआ । उनका मन उत्साह और डर से भर गया । जब मंच पर उनका नाम बुलाया गया तो वे घबड़ा गये । घबड़ाहट के कारण न जाने क्या-क्या जल्दी से पढ़ कर आ गये ।[7]

पं0 रामगोपाल शुक्ल जी से गुरुकुल मुलक आत्मीयता और जिंदगी की उष्मा के स्पर्श मिले । जब ये बरहज में थे, तभी पढ़रौना से अखिल भारतीय कवि सम्मेलन से निमंत्रण आया । इस निमंत्रण से मिश्र जी चकित हो गये कि इतने बड़े कवि सम्मेलन में उनके जैसे अनाम व्यक्ति के पास निमंत्रण कैसे आया । इस कवि सम्मेलन में बड़ी-बड़ी हस्तियों के निकट आने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ । वे थे- बच्चन, श्याम नारायण पांडे, गया प्रसाद शुक्ल सनेही ।[8]

धीरे - धीरे साहित्यकारों के बीच विख्यात होते गये । त्रिलोचन शास्त्री, लोक कवि चंचरीक जी से मुलाकात हुई । जब बी0 एच0 यू0 में गये तब इनके साथ शिवसागर मिश्र, राम विनायक सिंह, शंकर लाल मस्करा, उमाकान्त वर्मा और अन्य लोग भी थे । जब भी वे हीनभावना का शिकार होते थे, तब-तब इनकी कविता इनको अस्मिता देती थी तथा हीन भावना से उबारती थी ।

हिन्दू विश्वविद्यालय में जब बी0 ए0 में पढ़ते थे तब उनके विषय हिन्दी, नागरिक शास्त्र, और अर्थ शास्त्र थे । डा0 तिवारी और उमेश जी अर्थशास्त्र पढ़ाते थे, कन्हैया लाल शर्मा नागरिक शास्त्र । केशव प्रसाद इनके अध्यक्ष थे जिनका साहचर्य इनको प्राप्त हुआ ।

हिन्दू विश्वविद्यालय की एक गोष्ठी में ठाकुर प्रसाद से मुलाकात हुई । उनके संपर्क से इनका छायावादी संस्कार आहत हुआ । यह मार्क्सवादी की ओर

झुकने लगे । ठाकुर जी ने एक साहित्यिक संघ की, साहित्यिक संस्था की स्थापना की ।

नागरी प्रचारिणी सभा काशी में निराला जी की स्वर्ण-जयंती का आयोजन नंद दुलारी बाजपेयी जी कर रहे थे । इस अवसर पर हिन्दी साहित्य के अनेक महारथियों के दर्शन किये । जिनके बारे में पढ़ा या सुना हुआ था । सुभद्राकुमारी चौहान, लक्ष्मी नारायण मिश्र, दिनकर, शिवपूजन सहाय, नामवर सिंह आदि । निराला जी को नजदीक से देखने व जानने का अवसर भी मिला ।9

इसी विश्वविद्यालय में आचार्य हजारी प्रसाद त्रिवेदी, डा0 राजबली पाण्डेय, डा0 रामअवध त्रिवेदी, डा0 गोपाल तिवारी तथा मालवीय जी के संपर्क में आने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ । जब मालवीय जी के दिवगंत होने का समाचार सुनकर उनके कवि मन को बहुत बैचेनी हुई । उन्होंने उस पर एक कविता लिख डाली ।

चिता जल रही है गगन हिल रहा है,
धुआं में रहे कांप संदेश के स्वर,
अनल में जले जा रहे सांस के पर,
हुआ अस्त रवि चांद तारे खिलाकर,
किरन मौन होकर बहेगी निरन्तर ।10

एक घटना 1948 की है तब उनकी एक कविता चोरी हो गयी थी । रामनगर में कवि सम्मेलनमें ये अध्यक्ष बने और उन्होंनें कश्मीर पर पाकिस्तान के हमले को लेकर एक कविता लिखी ।11

आधुनिक साहित्य के उपाध्याय तथा आलोचक डा0 शर्मा के निर्देशन में पी0 एच0 डी0 किया । सर्जनात्मक शक्ति होने के कारण बहुत प्रबुद्ध छात्र इनका साहचर्य पाने को उत्सुक रहते थे । इनके घर भी आते, कविताएं सुनते, सुनाते तथा साहित्यिक जिज्ञासाएं भी प्रस्तुत करते थे ।

साहित्यिक संघ की स्थापना के बाद गोष्ठियां बहुत होती थी । एक दूसरे को सुनने-सुनाने के अवसर मिलते थे । साहित्यिक मित्र एक दूसरे यहां आते जाते थे । गोष्ठियों के प्रभाव से लेखन पर असर होता था । इस संस्था में इनके साथ त्रिलोचन,

नामवर सिंह, विष्णुचन्द्र शर्मा, विद्या सागर, नर्मदेश्वर उपाध्याय, सत्यव्रत अवस्थी, राम विनायक सिंह, केदारनाथ सिंह, शिव प्रसाद सिंह, ब्रज विलास, विष्णुस्वरूप तथा अन्य लोग भी शामिल थे । इनको साहित्यिक संघ का मंत्री बना दिया गया । साहित्यिक संचालन भी उनके परामर्श से होता था ।[12] गोष्ठियाँ और साहित्यिक समारोहों का सिले-सिलेवार लेखा - जोखा चलता ही रहा । उन दिनों न जाने कितनी विचार और काव्य गोष्ठियाँ बनारस में हुई । कितनी इलाहाबाद में, कितनी गोरखपुर में और कितनी अन्य शहरों में । यह भी एक इतिहास है - किसी समय के समाज और साहित्य का भावात्मक इतिहास ।

बड़ौदा में एम0 एस0 युनिवर्सिटी में आ जाने के बाद एम0 ए0 के छात्र भी विशेष लगाव रखने लगे । बी0 ए0 ऑनर्स के चार विद्यार्थियों को मिश्र जी के लेखकीय रूप का बोध हुआ । इन चारों में से रमणलाल पाठक जी भी थे, जो अब हिन्दी विभाग के अध्यक्ष है । इन चारों छात्रों को इस छोटी सी दुनिया में जो तृप्ति मिल सकती थी, वहीं वहां के अध्यापन की तृप्ति थी ।[13]

अहमदाबाद में "आस्था" नामक एक साहित्यिक संस्था बना रखी थी । उसकी गोष्ठियाँ लगातार होती थी । प्रायः इनके घर में भी होती थी । उसमें साहित्य रसिक प्रध्यापक तो भाग लेते ही थे । छात्र भी लेते थे । छात्रों को प्रोत्साहित करना ही उनका लक्ष्य था । रचनाओं पर चर्चा भी होती थी ।

अहमदाबाद में इनके शिष्यों में रघुवीर चौधरी, महावीर सिंह चौहान, कस्बेश, नवनीत, विनीत, भवर लाल गुर्जर, भोलाभाई पटेल आदि थे । जो उनके दुख-सुख में हमेशा उपस्थित रहते थे ।[14]

दिल्ली में आने के बाद माडल-टाउन विश्व विद्यालय तो शिक्षकों व साहित्यकारों का नगर ही बन गया था । इन साहित्यकारों और प्राध्यापकों में से देवी शंकर अवस्थी, अजीत कुमार, स्नेहमयी चौधरी, नामवर सिंह, शमशेर, सत्यदेव, चौधरी, उदयभान मिश्र, रमानाथ, त्रिपाठी, भोलानाथ तिवारी, कृष्ण चन्द्र शुल्क, विश्वनाथ त्रिपाठी और सावित्री सिन्हा आदि थे । नामवर जी तो नयी कविता और नयी कहानी के समीक्षक मसीहा बन चुके थे ।[15]

एक बार विश्वनाथ त्रिपाठी ने इनका परिचय नित्यानंद तिवारी जी से करवाया । नित्यानंद तिवारी के लेख पढ़ कर उनकी प्रतिभा का परिचय तो उन्हें था ही, मिलकर बेहद खुशी हुई । बाद में वे घर के सदस्य की तरह ही बन गये । इन्होंने मिश्र जी की कहानियों पर आलोचकीय लेख भी लिखे और मित्रता के दबाव से मुक्त होकर कहानी की सीमाओं का भी खुलकर निर्देश किया । जिससे मिश्र जी को अपनी कहानियों के आलोक में बुनियादी शक्ति भी प्राप्त हुई तथा कहानी लेखन में आस्था भी मजबूत हुई । 16

इसके अलावा और भी साहित्यिक मित्रों से इनका परिचय हुआ । नरेन्द्र मोहन और डा० विनय भी अच्छे साहित्यकार थे । जिन्होंने अपने प्रकाशन के द्वारा मिश्र जी की कहानियों का संग्रह छपवाया तथा पाठकों के सामने प्रस्तुत किया । वैसे तो लड़कियों के साथ मित्रता करने में मिश्र जी संकोच करते थे, लेकिन उनकी इस भावुकता, सरलता व सादगी से व्यवहार को देखकर लड़कियां इनसे मित्रता करना चाहती थी । ऐसे ही एक डा० सावित्री सिन्हा (जो हिन्दी विभाग की विभागाध्यक्ष थी) के साथ कोई औपचारिकता या दबाव महसूस नहीं करते थे । सावित्री जी के अध्यक्ष बनने पर मिश्र जी ने उनके यहां आना-जाना कम कर दिया ताकि उनका समय नष्ट न हो तो वे नाराज होते हुए बोली मैंने अध्यक्षता मित्रों को खोने के लिये स्वीकार नहीं की है । आप लोग तो विभागीय सहकर्मी भी है । आप लोगों की सलाह मशवरा के बगैर मैं अपना दायित्व पूरा भी नहीं कर पाऊंगी ।17

बाद में वे चेस्ट कैंसर का शिकार होकर सबको छोड़ गयी । हंसते-हंसते लोगो को सता गयी । इनकी प्रेरणा से मिश्र जी ने अन्य कवियों के सहयोग से "मुट्ठियों में बंद आकार" एक संकलन तैयार किया ।

अहमदाबाद में नक्षत्र संस्था के द्वारा आयोजित एक समारोह में हिन्दी के दो साहित्यकारों - अज्ञेय और मिश्र जी को बुलाया गया था जिसमें उन्होंनें कुछ चुने गये गीत भी गाये और रेडियों में भी उनका प्रोग्राम आया था ।

भवानीप्रसाद मिश्र, विष्णु प्रभाकर, डा० प्रभाकर माचवे, डा० भारत भूषण अग्रवाल गिरिजा कुमार माथुर, हिमांशु जोशी, डा० हरदपाल आदि साहित्यकार

मित्र थे। इनके साहित्य तथा व्यक्तित्व दोनों का रस इनको प्राप्त हुआ। इन साहित्यकारों में एक दूसरे से मिलने की अद्भुत उमंग थी। कुछ साहित्यकारों में सहज रूप से उनके गंवई संस्कार भी शामिल थे। जिसकी निकटता के कारण मिश्र जी गहरी आत्मीयता का साक्षात्कार करते थे।

साहित्यकार मित्रों के अतिरिक्त साहित्यकार व कवि छात्रों के साथ भी वे उसी प्रकार संपर्क में रहते थे। उनके शिष्यों में महावीर सिंह चौहान, वेद प्रकाश अमिताभ, विजेन्द्र, चन्द्रभानु भारद्वाज, जगदीश चतुर्वेदी आदि थे। इनकी साहित्य प्रगति के साथ मिश्र जी के प्रति सम्मान भाव की भी ऊष्मा बढ़ती गयी। वे अकारण ही इनको गुरुवत् मानते थे। मिश्र जी को इनके साथ बोलने, साहित्य चर्चा करने तथा घूमने फिरने में अच्छा लगता था।

इनके निर्देशन से अनेक छात्रों ने एम0 ए0, एम0 फिल0 और पी0एच0डी0 के शोध-प्रबन्ध लिखे। जिनके साथ इनका ज्यादा आत्मीय सम्बन्ध था। वे इब्राहीम शरीफ, मंजु सिन्हा, वीणा बंसल, देवदत्त वीणा अग्रवाल, ज्ञानचंद गुप्त, गोविन्द व्यास, शारदा वर्मा, कंचन महेता, सुषमा, वीरेन्द्र कुमार, रवीन्द्र त्रिपाठी, मुकुल शर्मा शर्मा, निर्मल बरन्वी, हरजेन्द्र चौधरी, रवीन्द्र, राजकुमारी पाण्डेय, श्री प्रकाश आदि थे। ये प्रबुद्ध छात्र थे। ये गुरु शिष्य की मूल्यवान परम्परा को जीना चाहते थे। अतः ज्यादा से ज्यादा समय इनके साथ सभाओं व गोष्ठियों में व्यतीत करते थे। इन छात्राओं के लेखन कार्य व विकास कार्य को देखकर इनका मन खुशी से फूल उठता था। मानों इनके जरिये वे अपना साहित्य को आगे बढ़ाना चाहते थे। इनकी प्रगति में उनको अपनी प्रगति दिखायी देती थी। कुछ छात्र जो कहीं अपने व्यापार - धंधे में लग गये। वे इनकी स्मृतियों में बस गये।

अंत में मिश्र जी के पैंसठ वर्ष पूरा करने के उपलक्ष्य में भारतीय लेखक संगठन ने एक साहित्यिक आयोजन किया। इस शुभ अवसर पर प्रभात प्रकाशन ने इनकी 61 कहानियों के संग्रह "इकसठ कहानियां" नाम से प्रकाशित किया था। इनकी अध्यक्षता नगेन्द्र जी ने की तथा जैनेन्द्र ने भी पदार्पण किया। मित्रों, पाठकों, छात्रों और अनेक लोगों के अपनेपन की खुशबू को फूल की तरह अपने भीतर ग्रहण किया। इससे बड़ी जीवन की उपलब्धि और क्या हो सकती थी। सबका स्नेहमय साहचर्य

इनको प्राप्त हुआ ।

" मिला क्या न मुझको ए दुनिया तुम्हारी,
मुहब्बत मिली है मगर धीरे - धीरे ।"

<u>व्यवसायिक जीवन {संघर्ष}</u> -:

अब तक तो बड़े भइया घर का बोझ संभाले हुए थे । लेकिन एम0 ए0 तक पहुंचाने के बाद भइया थक चुके थे अतः अपना दायित्व बोझ स्वयं अपने ऊपर उठाना महसूस किया और अपनी पत्नी को लेकर बनारस आ गये और पी0एच0डी0 के लिये दाखिला ले लिया । इसके बाद से इनके जीवन का संघर्ष काल शुरू हो गया । कमेच्छा में स्थित सेंट्रल हिन्दू कालेज में एक अस्थायी लेक्चरर शीप की सर्विस मिल गयी लेकिन छह मास के बाद सर्विस भी छूट गयी और इसके बाद से मिश्र जी को सौ रूपये की स्कॉलरशीप मंजूर कर दी गयी । इस स्कॉलरशीप से भी धीरे धीरे वे जीवन निर्वाह कर लेते थे लेकिन पी0 एच0 डी0 पूरी होने के बाद वह स्कॉलरशीप भी छूट गयी तथा उनको आर्थिक संघर्ष का सामना करना पड़ा । जिसके लिये वे नौकरी की तलाश में जुट गये । तभी एक जगह बड़ौदा से इन्टरव्यू आया और बड़ौदा में एम0 एस0 युनिवर्सिटी में सर्विस मिल गयी । इस नौकरी के मिलने से उनके भटकते हुए जीवन को एक सहारा मिल गया । विश्व विद्यालय की ओर से अध्यापक कुटीर में रहने की जगह भी मिल गयी । एस0 एस0 सी0 के परीक्षक भी बन गये ।

लेकिन बड़ौदा शहर उनको ज्यादा रास नहीं आया । एक साल बाद ही 1957 की जुलाईको अहमदाबाद के सेंट जेवियर्स कालेज में ज्वाइन कर लिया । सेंट जेवियर्स कालेज के हिन्दी विभाग में इनके साथ दो लोग और थे - विश्वनाथ शुक्ल और हरिहर शुक्ल । इसी बीच पी0 एच0 डी0 का रिजल्ट भी आ गया और 1957 में डिग्री भी मिल गयी ।

लेकिन अहमदाबाद में भी आठ वर्षों की यादगार लेकर दिल्ली के डी0 ए0 वी0 कालेज में आ गये । यहां पर हिन्दी विभाग में डा0 नगेन्द्र अध्यक्ष थे । डा0 सावित्री सिनहा {रीडर}, डा0 विजेयन्द्र स्नातक {रीडर}, डा0 ओम प्रकाश {रीडर} तथा डा0 उदयभानु सिंह प्रवक्ता थे । इसके अतिरिक्त डा0 देवी शंकर अवस्थी {अध्यापक} और डा0 रमानाथ त्रिपाठी {प्राध्यापक} थे ।

पी0 जी0 डे0 ए0 वी कालेज से दिल्ली विश्व-विद्यालय के साध्य संस्थान में

सेलेक्शन ग्रेड के आने की संभावना थी अतः उन्होंने उसके लिये आवेदन पत्र दे दिया। हिन्दी विभागाध्यक्ष के चुनाव में ये तीन बार अध्यक्ष बने रहे।

मन में तमन्ना थी कि एक दिन रीडर फिर प्रोफेसर बनूं लेकिन भाग्य साथ नहीं देता था वैसे तो सार्थक करने के लिये सब कुछ था और अवकाश ग्रहण करने का समय भी आ गया था।[18]

अंत में उनका यह सपना भी पूरा हुआ। 1984 में इतने संघर्ष करने के बाद प्रोफेसर हो गये। 31 जनवरी 1985 में रिटायर हो गये। फिर पांच वर्ष पुर्न-नियुक्ति योजना के अन्तर्गत सेवारत रहे। अंत में 31 जनवरी 1990 को अवकाश ग्रहण किया।

कथा - साहित्येत्तर विविध क्षेत्र -:

गुणवत्ता और वैविध्य दोनों दृष्टियों से स्वतंत्र्योत्तर रचनाकारों में रामदरश मिश्र जी की विशिष्ट पहचान है। कथा साहित्य (विशेषकर उपन्यास और कहानी) और कविता में तो उनका योगदान निश्चय ही महत्वपूर्ण है लेकिन आलोचना, निबन्ध और जीवनी लेखन में भी उनके कार्य को कम करके आंकना "निहितार्थ" के बिना संभव नहीं।

यहाँ पर मिश्र जी के समस्त रचनाकर्म की सूची को प्रस्तुत किया गया है। जिसमें उनके सभी क्षेत्रों की रचनाओं के नाम, सन् तथा प्रकाशन के प्रति निर्देश किया गया है।

उपन्यास-:

1) पानी के प्राचीर (1961)
हिन्दी प्रचारक संस्थान - वाराणसी।
(1986) द्वितीय संस्करण, वाणी प्रकाशन, दिल्ली।

2) जल टूटता हुआ (1969)
हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी।
(1978) द्वितीय संस्करण नेशनल प० हा० दिल्ली।

3) बीच का समय (1970)
राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।

4) सूखता हुआ तालाब (1972)
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

5) अपने लोग (1976)
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

6) रात का सफर (1976)
राधाकृष्ण प्रकाशन - दिल्ली।
(1987) द्वितीय संस्करण इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन-दिल्ली।

7) आकाश की छत (1979)
वाणी प्रकाशन, दिल्ली।

8) आदिम राग (बीच के समय का नया नाम) (1993)
वाणी प्रकाशन, दिल्ली।

...20..

<u>कहानी संग्रह</u> -:

1§ खाली घर §1968§
ज्ञान भारती प्रकाशन - दिल्ली ।

2§ एक वह §1974§
नेशनल पब्लिशिंग हाउस- दिल्ली ।

3§ दिनचर्या §1979§
नेशनल पब्लिशिंग हाउस - दिल्ली ।

4§ सर्पदंश §1982§
पराग प्रकाशन - दिल्ली ।

5§ बसंत का एक दिन §1982§
प्रभात प्रकाशन - दिल्ली ।

6§ इकसठ कहानियाँ §1984§
प्रभात प्रकाशन - दिल्ली ।

7§ अपने लिये §1991§
किताब घर - दिल्ली ।

<u>कविता संग्रह</u> -:

1§ पथ के गीत §1951§
राजेन्द्र एण्ड ब्रदर्स, बलिया ।

2§ बैरंग बेनाम चिट्ठियाँ §1962§
आस्था प्रकाशन - अहमदाबाद ।

3§ पक गई है धूप §1969§
भारतीय ज्ञान पीठ - दिल्ली ।

4§ कंधे पर सूरज §1977§
राधा कृष्ण प्रकाशन - दिल्ली ।

5§ दिन एक नदी बन गया §1984§
नेशनल पब्लिशिंग हाउस - दिल्ली ।

...21..

6) मेरे प्रिय गीत (1985)
अभयरण जैन एवं सन्तति - दिल्ली ।

7) जुलूस कहां जा रहा है । (1989)
प्रभात प्रकाशन - दिल्ली ।

<u>गजल संग्रह</u> -:

बाजार को निकले है लोग (1986)
विकास पेपर बैंक, दिल्ली ।

<u>ललित निबन्ध संग्रह</u> -:

कितने बजे है. (1982)
प्रभात प्रकाशन, दिल्ली ।

<u>आत्मकथा</u> -:

1) जहां मैं खड़ा हूं (1984)
किताब घर, दिल्ली ।

2) रोशनी की पगडंडियां (1986)
किताब घर, दिल्ली ।

3) टूटते - बनते दिन (1990)
किताब घर, दिल्ली ।

4) उत्तर - पथ (1991)
किताब घर, दिल्ली ।

<u>यात्रावृत्त</u> -:

तना हुआ इन्द्रधनुष (1990)
साहित्य सहकार, दिल्ली ।

<u>आलोचना</u> -:

1) हिन्दी आलोचना का इतिहास (1960)
हिन्दू वि0 वि0 - बनारस ।

2) साहित्य संदर्भ और मूल्य (1961)
एस0 चांद एण्ड कं0 - दिल्ली ।

3§ ऐतिहासिक उपन्यासकार वृन्दावन लाल वर्मा §1964§
एस0 चांद एण्ड कं0 - दिल्ली ।

4§ हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा §1968§
राजकमल प्रकाशन - दिल्ली ।

5§ हिन्दी समीक्षा : स्वरूप और संदर्भ §1974§
मैक मिलन एण्ड कं0 - दिल्ली ।

6§ आज का हिन्दी साहित्य संवेदना और दृष्टि §1975§
अभिनव प्रकाशन - दिल्ली ।

7§ हिन्दी कहानी : अंतरंग पहचान §1977§
नेशनल प0 हा0 - दिल्ली ।

8§ हिन्दी कविता :- आधुनिक आयाम §1978§
§ द्वि0 सं0§ वाणी प्रकाशन, दिल्ली ।

9§ छायावाद का रचनालोक §1981§
§द्वि0 सं0§ ज्ञान प्र0 - दिल्ली ।

10§ आधुनिक हिन्दी कविता : सर्जनात्मक संदर्भ §1986§
इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन - दिल्ली ।

<u>व्यक्तित्व</u> -:

मिश्र जी वैयक्तिक जीवन में सादगी, सरलता, स्वाभाविक, मधुरता, सौम्य शीतलता आदि गुणों से स्वान्तः सुख अनुभव करने वाले थे ।

व्यक्तित्व व्यक्ति के गुण समूह §जन्मजात, अर्जित, मानसिक, व शारीरिक§ का प्रभावात्मक बोध है । जिसको किसी एक शब्द में व्यक्त नहीं किया जा सकता । सामन्यतः इसके अन्तर्गत व्यक्ति के शारीरिक गठन, रूपरंग, वेशभूषा, रूचि व योग्यताएं, उसकी बुद्धि, स्मृति, कल्पना व विचार आदि मानसिक क्रियाओं की शैली तथाउसका चरित्र, समाजिक व्यवहार आदि प्रवत्ति की चर्चा की जाती है ।

मनोवैज्ञानिक नोरमन एल0 मन ने कहा है -

'" Personality may be defined as the Most characteristic integration of an Individuals structurar, modes of behaviour interests, attitudes, capacities, abilities is apttluder. "

इससे स्पष्ट है कि व्यक्तित्व का निर्माण किसी एक तत्व से नहीं, बल्कि व्यक्ति के स्वभाव के कई गुणों के संयोजन से होता है । जिसमें मनुष्य का आकार-प्रकार, रूपरंग, रहन-सहन आदि बाहय तत्व भी यथोचित रूप से सम्मिलित होते है । व्यक्तित्व ही का प्रभाव सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति पर सर्व प्रथम पड़ता है ।

व्यक्तित्व के इसी महत्व को पश्चिमी विद्वान चार्लस एम चास ने स्पष्ट किया है -

" Personality is to man what perfume is to flower."

व्यक्तित्व फूल की सुगंध की तरह व्यक्ति के अंदर से उद्भूत होता है फिर भी उसका भिन्न अस्तित्व भी बना रहता है ।

<u>बाहय पक्ष</u> -:

स्थूल रूप में व्यक्तित्व को बाहय और आन्तरिक कोणों में देखा जा सकता है । बाहय पक्ष में आकृति, वेशभूषा, रहन-सहन, खान-पान, व्यसन-व्यवहार हास-परिहास तथा बोल-चाल आदि से सम्बन्ध रहता है ।

व्यक्तित्व व्यक्ति का समग्र प्रभाव है । जिनसे उनकी उच्चता एवं विशालता की माप होती है । कोई व्यक्ति सारांश में क्या है, इसे ही दूसरे रूप में हम उसका व्यक्तित्व कहते है ।

अरसठ वर्ष की आयु में भी गठे हुए हष्ट-पुष्ट शरीर और मुख मंडल पर आदर्शों और संस्कारों से सिंचित गरिमा मय आभा से समन्वित प्रभावशाली व्यक्तित्व के धनी मिश्र जी का प्रथम दर्शन ही मिलने वालों को अभिभूत कर देता है । अपनी अमिट छाप छोड़ने वाले उनके इस समृद्ध व्यक्तित्व के निर्माण में उनके अन्तर्बाह्य तत्वों का योगदान है । जिनमें से कुछ तत्वों का अर्जन जीवन यात्रा के विभिन्न संघर्षमय पड़ावों व अनुभवों से किया है ।

...24..

मिश्र जी के जीवन में बाह्य ठाठ-बाट तथा आडम्बर का महत्व नहीं था। किसी भी कलाकार या कवि का कृतित्व-कौशल उसके व्यक्तित्व पर अपूर्ण प्रकाश डालता है।

वेशभूषा -:

मिश्र जी का जीवन सादा था, वैसे ही उनकी वेशभूषा भी सादी थी। बाल्यकाल में वे मामुली धोती, मामूली कुर्त्ता, या कमीज, सिर पर टोपी, पांव नंगा रखते थे। ऐसा नहीं, कि वे कभी जूता पहनते नहीं थे। कई बार चमरौधा जूता लिया था और शादी में पंप शू भी पहना था। लेकिन जूते काट-छाट देते थे। फिर यही मान लेते थे कि उनके पांव जूते लायक है ही नहीं, देहात में अधिकांश लोग बगैर जूते के ही होते थे।

बाद में सादा पजामा कुर्त्ता ही पहनने लगे। हमने उनसे जब भी साक्षात्कार किया तभी वे सादे लिबास में ही मिले। जिसमें उनका व्यक्तित्व और भी निखर रहा था। जैसे वे सादगी की मूर्ति से लग रहे हो।

दिनचर्या -:

पहले जब वे प्रोफेसर थे उसी कारण उनकी दिनचर्या भी उसी प्रकार नियमित रुप से चलती थी लेकिन अब तो ये रिटायर हो गये है। सारा समय अवकाश का मिलता है। जब किसी कार्य की इच्छा हुई, कर लिया, कोई बंधन नहीं।

जैसा कि उन्होने स्वयं कहा है "मैं लेखन सुबह करता हूं जब मेरे कमरे में चारों ओर जीवन प्रवाह का संगीत बजता रहता है। मैं कमरे में थोड़ा अकेला रहूं और बाहर दुनिया चलती रहे, मेरे लेखन की इतनी सी मांग होती है तो मैं स्वभावतः लोगों के साथ रहकर सुख पाता हूँ किन्तु उनके बीच से सिर उठाकर नहीं, उनके बीच कहीं खोकर। मैं अपने में डूबा रहने वाला व्यक्ति नहीं हूं। जिंदगी की चहल-पहल मुझे बहुत अच्छी लगती है। इसीलिये मैं लेखन भी रात के सन्नाटे में नहीं कर पाता।[8]

भरे-पूरे परिवार में रहने के कारण कुछ समय पोते-पोतियों के साथ बीत

जाता है । बाकी समय जब लिखने को मन होता है, लिखते है, पढ़ने को मन होता है, पढ़ते है । या मित्रों से गपशप करना या घूमने निकल जाना । यही उनकी दिनचर्या है ।

रहन-सहन तथा खान-पान -:

बचपन से ही देहाती संस्कार होने के कारण उनका रहन-सहन बहुत ही सादगी से परिपूर्ण है, जबकि दिल्ली जैसे महानगर में रहते हुए भी वे उसकी चमक-दमक व आधुनिकता पर न जाकर अपना सीधा-सादा जीवन व्यतीत करते है । बाहरी ठाठ-बाट व चमक-दमक उनको पसन्द नहीं थी । दिल्ली के उत्तम नगर में बाहर से देखने वाला यह विशाल भवन अंदर से सादगी व देहाती गुणों से पूर्ण है ।

खान-पान में भी सादा भोजन ही पसन्द करते है । देहाती होने के कारण उनको उसी प्रकार के भोजन में रूचि मिलती थी । कभी कहीं बाहर भोजन कर भी लेते थे । तो उनको उसमें इतना आनन्द का अनुभव नहीं मिलता था कि आज कुछ अच्छा भोजन खाया, बल्कि अपने घर के अतिरिक्त भोजन का कहीं स्वाद ही नहीं मिलता था । देशी खाना पसंद करते है, वे अंग्रेजों की भांति मेज कुर्सी पर बैठने के बजाय नीचे बैठकर खाना ज्यादा पसंद करते है । नकली आधुनिकता तथा अनौपचारिक तौर-तरीके पसंद नहीं थे ।

अन्तः पक्ष -:

मिश्र जी के व्यक्तित्व में कहीं कोई भी दीवार नहीं है । उन तक पहुंचना हर किसी के लिये सहज संभव है । उनका जीवन सहज जीवन है - धरती भेदकर फूटने वाला सहज जीवन, जिसमें भरपूर शक्ति और गति है । वे अब भी युवा है । जीने के रस से ही काल को भेदा जा सकता है । इसे वे जानते है, इसलिये खूब जीते है ।

आन्तरिक पक्ष में स्नेह, स्वभाव, अभिरूचियाँ, सदभाव तथा विविध मनोवृत्तियों आदि की चर्चा होती है ।

व्यसन आचार - व्यवहार -:

मिश्र जी के कोई विशेष व्यसन नहीं था । किसी भी क्षेत्र में वे नियमित नहीं बन सके और न ही किसी आदत के गुलाम ही । तम्बाकू, हुक्का, सिगरेट, बीड़ी का प्रयोग नहीं करते थे । ज्यादातर वे एकांत पसंद करते थे । घर में बैठना ज्यादा अच्छा लगता था । जब तक शीघ्रता से घर न पहुंच जायें, उन्हें चैन नहीं मिलता था ।

पार्थिक सुख - भोग, वैभव - विलास, मिथ्या प्रदर्शन आदि से उनका कोई सम्बन्ध नहीं ।

व्यवहार में मिश्र जी अत्यन्त हार्दिक और दूसरों के प्रेम को कभी विस्मृत नहीं कर पाये । प्रत्येक वर्ग के लोगों के साथ सहज ही अपनत्व स्थापित कर लेना उनका अपना विशिष्ट गुण था । उनकी विनय शीलता अथवा शिष्टाचार की प्रवत्तियां यह या धन के सम्मुख अतिरिक्त रूप से प्रदर्शित नहीं हुई । प्रत्येक से उनका व्यवहार शालीनता पूर्ण होता था । विनम्रता उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी । इसी से उनके व्यक्तित्व में एक विनयशील आकर्षण था । कोई छोटा हो या बड़ा, उनका शिष्य हो या गुरू, सबको सम्मानपूर्ण दृष्टि से देखते है । अपने से छोटों को भी बहुत आदर के साथ व्यवहार करते थे, जिससे उनके लिये उनके मन में कोई झिझक पैदा नहीं होती थी ।

हम स्वयं जब उनसे मिले तो जैसा कि पढ़ा या सुना था, उससे बढ़कर पाया । पहली बार साक्षात्कार करने पर भी ऐसा महसूस नहीं होता था कि हम उनसे पहली बार मुलाकात कर रहे है । उन्होंने सहज भाव से ही आदर-सत्कार किया ।

मिश्र जी के स्वभाव की एक मजबूरी यह है कि वे मित्रों और संस्थाओं को सर्वस्य भाव से समर्पण कर देने में कृपणता करते है । कई बार ऐसा भी होता है । दूसरे पक्ष के द्वारा जो तवज्जुह वह चाहते थे, उन्हें न मिल कर दूसरे को मिलता तो वे स्वंय को थोड़ी दूर पर खड़ा कर देते थे । मिश्र जी मित्रों के प्रति बहुत सक्रिय नहीं हो पाते थे, लेकिन कुछ ऐसा जरूर था उनके स्वभाव में, जिससे लोग सहज ही उनके प्रति आकर्षित हो जाते थे । इन्हें अपने छात्रों का भी असीम प्यार प्राप्त हुआ है ।

परिवारिक परिवेश होने के कारण इनका स्वभाव घरेलू-सा हो गया है । बाहर की दुनिया से घर - परिवार ज्यादा रूचिकर लगता है । यदि कहीं काम से बाहर जाना भी पड़ता हो तो शीघ्रता से निपट कर घर आकर ही चैन लेते हैं । दिन भर भटकना, संबधों की तलाश करना और विशेष अभिप्राय से संबध जोड़ते चलना और समय आने पर उन सम्बन्धो का उपयोग करना उनके स्वभाव में नहीं है । घर का गहरा लगाव बाहर भटकने से उन्हें रोकती है । आत्मीयता का ठोस परिवेश उन्हें सब तरफ से प्राप्त हुआ है ।

भावुकता -:

लेखक की अपेक्षा कवि अधिक संवेदनीयशील होता है । मिश्र जी कवि होने के कारण भी बहुत ही भावुक हृदय के व्यक्ति है । बचपन से लेकर अब तक उन्होने जो भी दर्दनाक दृश्य देखे तो उनसे उनका हृदय दहल जाता है । यहां तक कि किसी की बहन या बेटी का विदाई समारोह उन्हें भीतर तक हिला देती थी । बचपन से ही उन्होनें नारी पर होने वाले अत्याचारों को देखा था । यह सब देखकर वे बैचेन हो उठते थे । यह दर्द देखकर उनके हृदय में एक टीस भर जाती थी । वे उसे सहन नहीं कर सकते है । जब तक शब्दों के माध्यम से प्रकट नहीं करते थे, चैन नहीं लेते है ।

समाजिकता और विनोद -:

मिश्र जी एकांत प्रिय होते हुए भी असमाजिक नहीं है । यथा सम्भव प्रत्येक से अपना सम्बन्ध बनाये रखने में उन्हें सुख मिलता है । वे इस बात के लिये सदा सावधान रहते है कि उनके कारण किसी को कोई कष्ट न होने पाये ।

मिश्र जी विनोद प्रिय व्यक्ति है । सबके साथ हंसी-मजाक करना, उनके साथ घुलमिल जाना, उनके दुख को अपना समझने वाले व्यक्ति है ।

धार्मिक आस्था -:

मिश्र जी आर्य समाजी तो नहीं थे लेकिन वे आर्य-समाजियों के संगीतात्मकता प्रवचनों से बहुत ही प्रभावित होते थे । उनकी बातें

सीधी और भीतर उतरने वाली लगती थी क्योंकि उसमें राष्ट्रीय चेतना भी थी तथा समाज के आडम्बरों के विरूद्ध चोट भी ।

ये धर्म के नाम पर समाज पर लदे समाज के तमाम कोढ़ियों से प्रभावित नहीं होते थे, न ही उनके चमत्कारों से महिमान्वित ही होते थे । पंडे, पुजारियों के ढकोसलों, समाजिक-धार्मिक रूढ़ियों की गलाजतों के प्रति उनके मन में विरोध था । इन्हीं कारणों से वे सनातन धर्म के स्थान पर आर्य समाज को मानते है । इन्होंने धार्मिक आस्था का गहरा दबाव कभी अनुभव नहीं किया । लेकिन धार्मिक पर्वों को वे सदा सांस्कृतिक पर्व के रूप में ही अनुभव करते है । मिश्र जी गंगा-स्नान नहीं करते थे लेकिन गंगा स्नान करने आयी भीड़ के सौंदर्य में स्नान जरूर करते थे । विविध रूप रंग, स्वर, गंध से लहराते हुए इस भीड़ के सौंदर्य में वे डूब जाते थे । उनकी देहाती स्मृतियां जाग उठती थी और मन के भीतर एक समानी झलक भर जाती थी ।

स्नेह - स्वभाव -:

आज जब मानव स्वार्थी होता जा रहा है फिर भी वह स्नेह पाने के लिये व्याकुल रहा है । मिश्र जी ऐसे ही स्नेह के सागर है, जहां पर हर कोई डुबकी लगाकर उसमें पार हो सकता है । सभी के प्रति सद्भाव की सरिता निरन्तर उनके हृदय में बहती रहती है । किसी ने उन्हें कभी रूष्ट होते नहीं देखा, वे अपने विरोधियों से उसी प्रकार विनम्रता से हंसकर बातें करते है जैसा अपने मित्रों से । आलोचकों के प्रति भी उनके मन में द्वेष भावना नहीं प्रस्फुटित होती है । सबके साथ गुरू, मित्र, शिष्य के साथ समान आदरभाव रखते हैं ।

मानव - संवेदना -:

मिश्र जी एक संवेदनीयशील कवि है । समाज में व्याप्त शोषण आदि को देखकर उनका कवित हृदय चीत्कार कर उठता था । वे नारी के प्रति अत्याचारों को देखकर तथा किसी अन्य प्रकार का अन्याय को देखकर उनका संवेदनीय व्यक्तित्व विरोध कर उठता था ।

सांराश रूप में मिश्र जी का जीवन सरल, सामान्य, और व्यक्तित्व मध्यम कोटी का है । उनकी सहजता तथा विरलता व निर्विकारिता हर सहृदय और

...29..

सुरूचि सम्पन्न महत्वकांक्षी व्यक्ति के लिये ईर्ष्या की वस्तु है । वे अपने जीवन और व्यक्तित्व दोनों में कहीं भी असामान्य नहीं रहें, फिर भी वे एक ऐसा शान्त आकर्षण बिखेरते थे, जिसे व्यक्त नहीं किया जा सकता । केवल अनुभव किया जा सकता है । कोई किसी भी समय उनके तरल दृगों में अनेक भाव प्रबल हृदय का बिम्ब देख सकता है । उनका व्यक्तित्व दृक्-शील तथा करूणा से भरा हुआ है । उनका सहज, शांत और गतिशील व्यक्तित्व दुर्लभ है । यही कारण है कि कवि-गोष्ठियों में जब भी वे मंच पर विराजते है तब वे अपने व्यक्तित्व इन्हीं विशेषताओं के कारण अपने विषय में एक विशिष्ट माहौल व प्रतिभाव खड़ा कर देते है ।

इस प्रकार मिश्र जी के कथा-साहित्य को जाननें से पहले उनका साहित्यिक व्यक्तित्व का परिचय पाना जरूरी है । क्योंकि आलोच्य साहित्यकार के व्यक्तित्व के अध्ययन से अनभिज्ञ रहना अनुसंधान के लिये अपूर्ण माना जायेगा । उनका व्यक्तित्व उद्दात गुणों से युक्त है ।

सन्दर्भ सूची

01)	जहां मैं खड़ा हूँ (आत्म कथा)	पृ0 - 18
02)	रोशनी की पगडंडिया	पृ0 - 243
03)	उत्तर पथ	पृ0 - 128
04)	रोशनी की पगडंडिया	पृ0 - 128
05)	टुटते बनते दिन	पृ0 - 402
06)	उत्तर पथ	पृ0 - 492
07)	रोशनी की पगडंडियां	पृ0 - 122
08)	-"-	पृ0 - 164
09)	-"-	पृ0 - 234
10)	-"-	पृ0 - 240
11)	-"-	पृ0 - 245
12)	टुटते बनते दिन	पृ0 - 307
13)	-"-	पृ0 - 339
14)	-"-	पृ0 - 420
15)	उत्तर पथ	पृ0 - 448
16)	-"-	पृ0 - 488
17)	-"-	पृ0 - 502
18)	-"-	पृ0 - 572
19)	टुटते बनते दिन	पृ0 - 307